बचपन का सपना
बॉक्स ऑफिस पर धमाल

गुजरात के एक बिल्डर भूपति साखिया के घर में पैदा हुए अंकित को बचपन से ही यह शौक पैदा हुआ कि बड़ा होकर फिल्म बनाऊंगा। घर वालों ने इस शौक का विरोध नहीं किया, लेकिन उसके सामने यह शर्त रखी कि अपनी शिक्षा पूरी करो, फिर जो चाहो करो। पिता चाहते थे कि बेटा इंजीनियर बने। अंकित ने पिता की इच्छा का सम्मान करते हुए पढ़ाई की और समय के साथ वह सिविल इंजीनियर बन गया।

-शबाहत हुसैन विजेता, लखनऊ

पूरा हुआ बचपन का सपना

कहानी तैयार हो गई। सभी दोस्तों ने पैसा जुटाया। एक दोस्त के फार्म हाउस पर शूटिंग शुरू हुई। अपनी कोशिशों से अच्छा कैमरामैन जुटाया। कुछ बाहर की लोकेशन भी देखीं। रास्ता धीरे-धीरे मंजिल की तरफ बढ़ चला। फिल्म लालो शूट हो गई। लालो यानी लड्डू गोपाल। 50 लाख रुपये खर्च हो गए थे। सपना बगैर धुली रील में बंद था। रील धुलवाकर सपने का सच देखना था। फिर से पैसा जुटाने की कोशिशें शुरू हुईं। सभी दोस्तों ने पैसा जुटाया। कहीं से लोन नहीं लिया। 60 लाख रुपये और खर्च हुए। एक करोड़ 10 लाख रुपये का जुआ खेलने के बाद 600 सिनेमाघरों में एक साथ अपने सपनों की फिल्म लालो रिलीज कर दी। रिलीज होते ही फिल्म ने कमाल कर दिया। 9 जनवरी 2026 को रिलीज हुई फिल्म ने 14 जनवरी तक 120 करोड़ रुपये कमा लिए। बचपन का सपना इस तरह से पूरा होगा अंकित ने सोचा नहीं था। बॉक्स ऑफिस पर धमाल मचाने के बाद सभी दोस्त मथुरा में कृष्ण जी का शुक्रिया अदा करने गए। वहां से वापसी में लखनऊ आए।

अंकित की जुबानी

उत्साह से भरे अंकित साखिया बताते हैं कि जिंदगी की कोई भी कोशिश बेकार नहीं जाती है। पिताजी ने इंजीनियरिंग की पढ़ाई कराई थी ताकि उनके बिल्डर के बिजनेस में इजाफा हो जाए, लेकिन मैंने फिल्मों का रुख किया तो यहां भी इंजीनियरिंग की पढ़ाई काम आई। इंजीनियरिंग में सीखा मेजरमेंट फिल्मों में काम आया। जुगाड़ की तकनीक इंजीनियरिंग से सीखी। इसके अलाबा सामने वाले को समझने की कोशिश और सभी को सुनने की आदत ने सफलता दिलाने में मदद की। अंकित से जब यह पूछा कि अपना सपना पूरा करने के लिए एक करोड़ 10 लाख रुपये का जुआ खेला था, अगर फिल्म फ्लाप हो जाती तो सपने का क्या होता। वो बोले कि फिल्म फेल हो जाती तो दूसरी फिल्म बनाता, दूसरी फेल हो जाती तो तीसरी बनाता, यह तो जर्नी है, रास्ता तो रिस्क वाला ही है, पैसा कमाना तो मकसद था भी नहीं, अब पैसा कमा लिया है, तो लगता है कि हमने कृष्ण को नहीं चुना, कृष्ण ने ही हमें इस काम के लिए चुना था। उत्साह से भरे अंकित बताते हैं कि फिल्म में आपको सौराष्ट्र दिखेगा, खूबसूरत लोकेशन और खूबसूरत सोच दिखेगी। सफलता मिली है, तो शांत रहने का फन सीख रहा हूं, जो हासिल हुआ है, उसे मेहनत का प्रसाद मान रहा हूं। पहचान बढ़ी है, तो इसमें बढ़ी हुई जिम्मेदारी भी देख पा रहा हूं। मैं पैसे वाले घर में पैदा हुआ हूं, लेकिन अपने शौक के पैसे खुद कमाए हैं। अपनी जरूरतों के लिए प्री वेडिंग शूट से शुरुआत की थी। लोगों की शादियों के वीडियो बनाए थे। फिल्म को सफलता मिली है, तो यह एक टीम की सफलता है। टीम को जोड़े रखना है और आगे बढ़ते जाना है।

फिल्म बनाने पर हुआ मंथन

अंकित सिविल इंजीनियर बन तो गए,लेकिन उसके बाद बचपन की दबी इच्छा ने फिर जोर मारा। उसने कुछ शार्ट फिल्म बनाईं। वेब सीरीज पहला गुलजार का निर्देशन किया, लेकिन सपना तो फिल्म बनाने का था। जैसी सोच वैसे साथी। समय के साथ कारवां बनना शुरू हुआ। धीरे-धीरे 15 लड़के एक जैसी सोच के मिल गए। सभी फिल्म बनाना चाहते थे। फिल्म में क्या बनेगा यह किसी ने नहीं सोचा। सिर्फ यह दिमाग में रखा कि कुछ अलग बनाएंगे। सभी दोस्त साथ में बैठे। विषय पर खूब दिमाग लगाया। सोचा ऐसी फिल्म बनाएं, जिसमें भगवान आम आदमी जैसा नजर आए। श्रीमद्भागवत पढ़ी। कृष्ण का किरदार एक हीरो जैसा किरदार लगा। फिर कहानी पर काम शुरू हुआ। कहानी ऐसी, जिसमें किसी भी मेहनतकश इंसान की मदद भगवान आम आदमी के रूप करता है। भगवान आता है, समझाता है, रास्ता दिखाता है, डांटता है, तारीफ करता है, उत्साह बढ़ाता है और सफलता के रास्ते पर ले जाता है।

ओटीटी

बैशन 36

फ्रेंच पुलिस एक्शन ड्रामा फिल्म बैशन 36 के इस इंग्लिश रूपांतर को मैंने हिंदी डब्ड वर्जन में देखा है। यह मिशेल टॉर्चर द्वारा 2013 में लिखे नॉवेल "फ्लिक्स रिक्वियम" पर आधारित है। यह सच्ची कहानी नहीं है, पर इसमें जो परिस्थितियां दिखाई गई हैं, वो किसी भी पुलिस व्यवस्था में, किसी भी देश में संभव हैं। फिल्म मुख्यत: एक बहुत ही काबिल और लोकप्रिय पुलिस इंस्पेक्टर एंटोइन सेरडा (विक्टर वेलमोंडो) के जीवन की घटनाओं पर केंद्रित है, जिसे अपने प्राइवेट (परंतु गैर कानूनी) फाइट के शौक और उसके कारण एक भारी मारपीट की घटना के लिए अपने महत्वपूर्ण "गैंगवार विभाग" से निकालकर दूसरे सामान्य पुलिसिंग विभाग में स्थानांतरित कर दिया जाता है। परंतु इसके बाद उसके विभाग में बहुत हलचल मचा देने वाली असामान्य घटनाएं होती हैं। उसके दोस्त मारे जाते हैं और एक गायब भी हो जाता है। किसी खतरनाक गैंग पर शक होता है, परंतु सेरेडा को इस मामले में न पड़ने की कई बार हिदायत के बावजूद वह नहीं मानता और उसे सस्पेंड कर दिया जाता है। अब वह अकेले ही इसकी खोजबीन में लग जाता है। इसके आगे आप फिल्म में देखिए।

वह कितना सफल होता है और किन परिस्थितियों में पुलिस विभाग और उसके साथी कैसे-कैसे अनपेक्षित निर्णय और कदम उठाते हैं, यह ही फिल्म की विशेषता है। अपने देश में भी अक्सर ऐसा होता है, जब बहुचर्चित पेचीदा केस हल तो हो जाते हैं, परंतु दंडित अपराधियों और खोजबीन के परिणामों पर रहस्य बना रहता है। जैसे प्रसिद्ध निठारी हत्याकांड या एक डॉक्टर की बेटी की हत्या जो दिल्ली में हुई थी। पश्चिमी लेखकों के दिल ओ दिमाग से "सिग्मंड फ्राइड" की थ्योरी का भूत उतरता ही नहीं कि हर वयस्क व्यक्ति अपने बचपन, माता-पिता और पालन-पोषण का बोझ लिए रहता है और उसका व्यक्तित्व उन्हीं का परिणाम होता है। सेरेडा अपने बददिमाग बाप और डोमेस्टिक वायलेंस के प्रभाव के कारण प्रायवेट फाइट्स लड़ता है, जो उसके करियर को खराब कर देती है। मैं इससे इस हद तक सहमत नहीं हूं और कम से कम यह भारत में तो संभव नहीं हैं और इसके कारण भी हैं।

खैर, घटनाएं तेजी से घटती हैं, पुलिस एक्शन वास्तविक लगता है, रेडीमेड पार्श्व संगीत भी अच्छा लगता है, तेजगति कार चेज को बिल्कुल अलग धुनों पर चलाया गया है, शायद फ्रांसीसी लोगों का प्रयोग है, लेकिन अच्छा है। ऐसी फिल्मों में अदाकारी घटनाओं के दृष्यांकन की उत्कृष्टता के पीछे छिपी रह जाती है। मुख्य चरित्रों ने अच्छा काम किया है, जिससे उनके चरित्र विश्वसनीय बने हैं। अंत कुछ सीमा तक ओपन है, पर संभावनाएं स्वीकारने योग्य हैं। एक दो गाली और एडल्ट दृश्य भी हैं। Imdb रेटिंग सामान्य होने के बावजूद यह फिल्म देखने लायक है। मुझे तो अच्छी लगी। स्पॉयलर न हो जाए इसलिए कई लिखने लायक बातें छोड़नी पड़ी है।

समीक्षक-ब्रज राज नारायण सक्सेना

गहरे संदेश देती कंजक

विवेक शुक्ला
वरिष्ठ पत्रकार

हिंदुओं के लिए नवरात्रि सिर्फ त्योहार नहीं, एक गहरी भावना है, जो हमारी संस्कृति में बसी हुई है। साल में दो बार मनाया जाने वाला यह त्योहार अष्टमी या नवमी पर कंजक या कन्या पूजन के साथ खत्म होता है। इस दिन घर में नौ छोटी लड़कियों और एक लड़के (जिसे अक्सर लोंकड़ा या लंगूर कहते हैं) को बुलाया जाता है और उन्हें मां दुर्गा का जीवंत रूप मानकर पूजा जाता है। उन्हें पूड़ी, हलवा और चना खिलाया जाता है, उपहार दिए जाते हैं और उनके पैर छुए जाते हैं। यह रस्म शुद्धता, भक्ति और स्त्री शक्ति के प्रति कृतज्ञता का प्रतीक है।

नवरात्रि में होने वाली कंजक रस्म बहुत पवित्र और प्यारी है, लेकिन इसमें कुछ सामाजिक बारीकियां और रोजमर्रा की मुश्किलें भी छिपी हैं। इन्हीं बातों को बहुत खूबसूरती से दिखाया गया है फिल्म 'कंजकः द गर्ल विदाउट अ नेम' में। यह फिल्म सच्चिदानंद जोशी की कहानी पर आधारित है। राहुल यादव ने इसे बहुत संवेदनशीलता से निर्देशित किया है। यह हाल ही में रिलीज हुई एक छोटी, लेकिन गहरी छाप छोड़ने वाली कहानी है, जो दिल्ली के एक मध्यमवर्गीय घर में दुर्गा पूजा के दौरान घटित होती है।

पूजा से पहले का हंगामा- कहानी की मुख्य किरदार हैं एक सम्मानित और धार्मिक महिला, जिन्हें सब प्यार से 'आंटी' कहते हैं। मालविका जोशी ने इस रोल को बहुत शिद्दत से निभाया है। आंटी कन्या पूजन की हर छोटी-बड़ी तैयारी पूरी लगन से कर रही हैं, लेकिन सुबह होते ही सब उल्टा-पुल्टा हो जाता है। घर की मदद करने वाली मीना नहीं आती। प्लेटें, चढ़ावा, यहां तक कि पूजा की दरी भी गायब हो जाती है। घर वाले बेचैन और चिढ़े हुए हैं। आंटी की घबराहट बढ़ती जाती है। उनकी यह परेशानी एक गहरी सच्चाई दिखाती है। औरतों पर ही अक्सर संस्कृति और धर्म की रस्मों को पूरी तरह निभाने का बोझ पड़ता है। रस्म की पवित्रता खतरे में लगती है और घर का माहौल तनाव से भर जाता है। फिल्म इन घरेलू बातों को बहुत सच्चाई से दिखाती है। छोटी-छोटी चिढ़, पीढ़ियों का फर्क और नीचे-नीचे छिपी भक्ति बिना ज्यादा बढ़ा-चढ़ाकर, जो शुरू में घरेलू हंगामे जैसी हल्की-फुल्की कॉमेडी लगती है, वो धीरे-धीरे बहुत गहरी सोच वाली बात बन जाती है।

अचानक आई वो रहस्यमयी दीदी

फिल्म में जब तनाव चरम पर पहुंचता है, तभी एक युवती जिसे सिर्फ 'दीदी' कहा जाता है, अचानक आ पहुंचती है और ठीक नौ लड़कियों के साथ। उसका आना ऐसा लगता है, जैसे भगवान ने खुद भेजा हो। वो शांत और आत्मविश्वास से भरी हुई है। वो गायब चीजें ढूंढ निकालती है, सबको बैठाती है, बच्चों से प्यार से बात करती है और आंटी को ढाढ़स बंधाती है। एक पल में सब बदल जाता है। घर जो तनाव से भरा था, अब गर्मजोशी और सुखद माहौल से भर जाता है। लड़कियां हंसती-खेलती हैं, गाती हैं और पूजा में खुशी-खुशी हिस्सा लेती हैं। दीदी की शांत कार्यक्षमता और संयम से रस्म सिर्फ रस्म नहीं रह जाती, बल्कि सच्ची भक्ति और एकता का रूप ले लेती है। ये लड़की (सवलीन कौर) घर की मालकिन आंटी से बात करते हुए एक कड़वी सच्चाई कह देती है। हमने अपनी नदियों को बहुत गंदा कर दिया है। उसकी बात उत्सव की खुशी में चुभ जाती है। खासकर दिल्ली में, जहां कंजक के बाद लोग यमुना किनारे जाकर बचे-खुचे प्रसाद को बहा देते हैं और यही नदी को और गंदा करते हैं। यह पल हमें सोचने पर मजबूर करता है कि क्या बिना जिम्मेदारी वाली रस्म सच में भगवान की इज्जत करती है?

एक आध्यात्मिक मोड़

पूजा खत्म होने पर माहौल गंभीर हो जाता है। कबीर का भजन धीरे-धीरे बजता है: 'मोको कहां ढूंढे रे बंदे, मैं तो तेरे पास में।' यह भजन फिल्म के मुख्य संदेश को रेखांकित करता है। बिना ज्यादा खुलासा किए, कहानी में दीदी की असलियत का एक दमदार ट्विस्ट लाता है। यह ट्विस्ट कहानी को घरेलू सच्चाई से आध्यात्मिक प्रतीक तक ले जाता है। यह बताता है कि भगवान सिर्फ बड़ी-बड़ी रस्मों या दूर की मूर्तियों में नहीं, बल्कि इंसानी रिश्तों, दया और सच्ची श्रद्धा में बसता है। 'बिना नाम वाली लड़की' एक प्रतीक बन जाती है, उस पवित्रता की, जिसे हम अक्सर अनदेखा कर देते हैं। क्लाइमेक्स ड्रामेटिक नहीं, बल्कि सोचने वाला है। फिल्म खत्म होने के बाद भी दिमाग में घूमती रहती है।

रस्म से परे भक्ति

सच्चिदानंद जोशी की कहानी सामाजिक टिप्पणी के लिए जानी जाती है और फिल्म ने उसे अच्छे से अपनाया है। यह समावेशिता, औरतों की संस्कृति बचाने की भूमिका और जाति-वर्ग-धर्म की दीवारों को तोड़ने की बात करती है। यह सवाल उठाती है कि क्या सिर्फ यांत्रिक रस्में करने से भक्ति बची रहती है या असली भक्ति तो सहानुभूति और खुले दिल में है। राहुल यादव का निर्देशन हास्य, कोमलता और दर्शन के बीच संतुलन बनाए रखता है। गति तेज है, एक्टिंग स्वाभाविक है और कहानी बिना बनावट के है। मालविका जोशी ने आंटी के घबराहट से आश्चर्य तक के सफर को खूबसूरती से निभाया है। बच्चे भी बहुत सहज और मासूम लगते हैं। 'कंजक: द गर्ल विदाउट अ नेम' सिर्फ त्योहार वाली शॉर्ट फिल्म नहीं है। यह एक कोमल याद दिलाती है कि सच्ची भक्ति कठोर रस्मों में नहीं, बल्कि इंसानियत में है। आजकल जब त्योहार दिखावा बन जाते हैं, यह फिल्म हमें भक्ति का असली मतलब फिर से याद दिलाती है। यह हमें सोचने पर मजबूर करती है कि हम भगवान को कहां ढूंढते हैं? शायद वो दूर नहीं, हमारे बगल में ही हैं, बिना नाम का, अनदेखा, लेकिन बहुत असली। अपने शांत और सादे अंदाज में यह फिल्म भारतीय परंपरा, सामाजिक सोच और सार्थक कहानी का बेहतरीन मिश्रण है, जो भारतीय संस्कृति, सामाजिक मुद्दों और अच्छी कहानी पसंद करते हैं, उनके लिए यह फिल्म जरूर देखने लायक है। दिल को छूने वाली और लंबे समय तक याद रहने वाली।

जिंदगी का सफर

हर फिल्म में 'प्राण' डालने वाले प्राण

अभिनेता प्राण की गिनती बॉलीवुड के चुनिंदा दमदार कलाकारों में होती है। प्राण कृष्ण सिकंद यानी प्राण की पहचान हिंदी फिल्म जगत के सबसे खूंखार विलेन के तौर पर की जाती है। प्राण का जन्म 12 फरवरी 1920 को हुआ। उनके पिता सिविल इंजीनियर थे। युवा अवस्था में फोटोग्राफी सीख रहे प्राण ने विभाजन से पहले कुछ पंजाबी और हिंदी फिल्मों में बतौर लीड एक्टर काम किया। विभाजन के बाद वे हिंदुस्तान आ गए और यहां उन्हें फिल्मों में बतौर विलेन पहचान मिली। 1950 से 1980 के दशक तक वे इंडस्ट्री के सबसे खतरनाक विलेन के रूप में मशहूर रहे। 2013 में मुंबई के लीलावती हॉस्पिटल में सांस लेने की समस्या के कारण 93 साल की आयु में निधन हो गया।

प्राण के फिल्म इंडस्ट्री में कदम रखने की दास्तान किसी फिल्मी स्क्रिप्ट से कम नहीं है। प्राण अक्सर लाहौर में एक पान की दुकान पर जाया करते थे। उसी पान की दुकान पर मशहूर फिल्म राइटर वली मोहम्मद भी पान खाने जाते थे। जब वली मोहम्मद फिल्म यमला जट बना रहे थे, तो उसमें उन्हें खलनायक के रोल के लिए किसी नए चेहरे की तलाश थी। वली मोहम्मद की नजर जब प्राण पर पड़ी तो उन्होंने प्राण को मिलने के लिए बुलाया। अभिनेता प्राण ने वली मोहम्मद की बात को कोई तवज्जों नहीं दी। जब दोबारा दोनों की मुलाकात हुई, तो वली ने प्राण को फिल्म में काम करने के लिए तैयार कर लिया। इसके बाद प्राण ने फिल्म यमला जट में काम किया। इस फिल्म में अभिनय करने के बाद फिर कभी प्राण ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। प्राण ने राम और श्याम, मिलन, जंजीर और डॉन जैसी एक से बढ़कर एक बहुत सी शानदार फिल्मों में काम किया। अभिनय का जौहर दिखा चुके अभिनेता प्राण की गिनती बॉलीवुड के महानतम कलाकारों में की जाती है। प्राण ने जिंदगीभर वली मोहम्मद को अपना गुरू माना। प्राण ने अपने शानदार काम की बदौलत कई बार फिल्म फेयर का पुरुस्कार जीता। इसके साथ ही सन् 2000 में स्टारडस्ट ने विलेन ऑफ द मिलेनियम के खिताब से नवाजा गया। 2001 में भारत सरकार ने पद्मभूषण से सम्मानित किया। इसके अलावा 2013 में प्राण को दादा साहेब फाल्के अवॉर्ड दिया गया। वो आज भी अपने जबरदस्त एक्टिंग के कारण हम सबके दिलों में जिंदा हैं।